

स्वीकार



निम्न लिखित सत्र गृहस्थोंकि तर्फसे इस सस्थाको द्रव्य सहायता मिलनेसे धन्यवादके साथ सहर्ष स्वीकार करनेमें आति है.

६१) शाहा मगिरामजी घरजमलजी द्वारा 'कस्तुरमाई'
रातगढवालोकी तर्फसे

५१) शाहा सीवलालजी पुनमचन्दजी कौचर फलोधी-
वालोकी तर्फसे,

२५) शाहा गमीरमलजी माणकमलजी दीगणघाटवालोंकि
तरफसे सुहारमलजी भायकद्वारा.

अन्य सजनोंको भी इसका अनुकरण कर ज्ञान प्रचारमें
अवश्य सहायक बनना चाहिये

प्रकाशक



श्रीसुखसागर ज्ञानधिन्दु नम्बर ४

श्री सोमसुन्दरमूरीके शिष्य जिनहर्षगणि कृत—

श्रीगुणानुरागकुलकं.

भाषान्तर कर्ता

श्रीमदुपदेशगच्छीया

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज

—ॐ—

द्रव्य सहायक,

श्री सुखसागर ज्ञान प्रचारक सभा-लोहावट

—ॐ—

प्रकाशक,

श्री जैन नवयुवक मित्रमण्डल

मु लोहावट—जाटावास (मारवाड)

प्रथमावृत्ति १०००

विम्वसवत १९८०

आत्मका दिन सुषारिक हो ।

आज ज्ञानपञ्चमीका दिन है यह बड़े नगरोंमें आज ज्ञानका महोत्सव निमित्त ज्ञान कोटडीयों बची है भदरोंसि ज्ञानमुस्तकें उवासनपर पधराये गय है ज्ञानकी पूजा, ज्ञानकी प्रभावना, ज्ञानाराधनार्थ मुनिमहाराज आज ज्ञान विषयक व्याख्यान द रह है धोलाजन ज्ञानपूजाके साथ ज्ञान श्रवण कर रह है सुहागन बहनों सुन्दर वस्त्राभूषण पहरेक ज्ञानकी गहुलीयों कर रही है आचार्योंपाध्यायजी महाराज अपने शिष्यमंडलार्थ नये नये आगमोंकी वाचनाका प्रारम्भ कर रह है ज्ञानामिलापी शिष्यमन्त्र नये नये ज्ञान कण्ठस्थ करना शरु बीया है केइ लोगाने नये नये ग्रन्थ पढना प्रारम्भ किया है केइ ज्ञानप्रेमी भागम श्रवण केइ ज्ञान अनुमोदन कर रहे है केइ ज्ञानोपासक अष्टाव्यसे धाल भर भर पूजाकी सामग्री ला रह है केइ पांच ज्ञानकी पूजा मण्य रहे है केइ प्रभुकी आंगी रच रह है इत्यादि आजका दिन ज्ञान आराधनमें प्रधान है इस सुभवसरपर मेरे जैसे बालजीवोंको भी कुछ न कुछ ज्ञानाराधन अवश्य करना चाहिये जिनसे स्वपरात्मावोंका कल्याण हो इस विचारके निर्यय करत हुवे आज मेरी यह भावना हुई कि मोक्षमार्ग साधन करनेका अनेक कारण है जैसे सामाजिक प्रतिक्रमण पूजा, प्रभावना दान शील तप भाव क्षमा, दया, सलोच, त्याग वैराग, निर्लोभता अम नियम आगम समाधी ज्ञान ध्यान इत्यादि परन्तु इन सब कारणोंके अन्दर माला हुवा असाधारण कारण जो कि दुनियाँ मुम्बूर्वक धारण कर कल्याण कर सके निमित्त नाम है 'गुणानुगम' उत्तम गुणोंपर जिन मन्व्य जीवोंका अनुगम है उनके अन्दर हजारों गुण सत्ता ही प्रवरा हो सकत है इस लिय आत्मकल्याणका प्रथम मंगलाचरण 'गुणानुगम' है यह अहूर्त ग्रन्थ पूर्व महा ऋषियोंने भागधी भाषामें सकलीत बीया था इस भाषाकी निम्न प्रवलीत भाषाम जनता अधिक लाभ उग सक इस इरादामे इन मूल ग्रन्थक साथ प्रवलीत हिन्दी भाषा कर ज्ञानपदकी आराधना करना हमारा कर्तव्य रामज स्व-पर आत्माका कल्याणके लिय ही इस कायको ज्ञानपञ्चमीको प्रारम्भ किया है शम्

मुनि ज्ञानसुन्दर-लोहाकर.

श्री रत्नप्रभ सूरेश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

गुणानुराग कुलक

सयल रुद्राण्य निलयं । नमिउण्य तित्यनाह पय कमल ।

परगुण गहण सरुव भणामि सोहणसिरि जणय ॥ १ ॥

अर्थ—सकल कल्याण के निवास स्थान, तीर्थ के नाथ तीर्थ-
 चर भगवान वीर प्रभु—कैवल्यज्ञान कैवल्यदर्शन धारक सर्वज्ञ वीतराग
 जित फेवल अविहन्त अनन्तज्ञान—दर्शन—चाग्रि—तप—वीर्य—दान—
 ज्ञान—भोग—उपभोग—वीर्यवन्त अनन्तदायक गुण के धारक त्रिलोक्य
 पूजनीय त्रिलोक्यनाथ, त्रिलोक्यतात त्रिलोक्यभ्रात त्रिलोक्यचन्द्र
 त्रिलोक्यसूर्य त्रिलोक्यदयाल त्रिलोक्यमयाल त्रिलोक्यप्रतिपाल त्रिलो-
 क्यज्ञान त्रिलोक्यज्ञानी त्रिलोक्यध्यानी त्रिलोक्यदानी त्रिलोक्यपण्डित
 त्रिलोक्यमण्डित त्रिलोक्यज्ञानदीपक त्रिलोक्यभाषक त्रिलोक्यमिथ्यानि
 मग्नासक त्रिलोक्यमोहजीपक जगताधार जगत्लोचन जगत्तुल्योचन
 जगत्हेतु जगत्प्रेतु जगत्ेश्वर जगत्में जाज समान महामहाण महाजाण
 महाआचारी महाश्रद्धाचारी महातपस्वी महाज्ञानी—ध्यानी—दानी महागोप
 महासावत्यवहा महाकृपाज महाकरुणासागर परमनियामक परमदृष्ट पर-
 ममिष्ट परमवेदी परमगारुडी परमज्योति परमक्रान्ती परमशक्ति परमो-
 पकारी परमपूज्यवन्त परमनिर्लोभी परमत्यागी परमपरमात्मा अवोधी

अमानि अमायि अलोभी अरागी अद्वेपी चितन्द्रिय सुमति गुप्ती प्रतिपन्न
 अहिन्नदव जिनशरदेव वीतगगदव मुनीन्द्रदव दवेन्द्रदव नागेन्द्रदेव
 असरणमरण अतरण तारण अनाथनाथ दीनोद्धारक चौंतीम अतिशय
 पैनिसवाण्णिगुण अष्टमहाप्रतिहार सयुक्त इत्यादि अननगुण धारक
 तीर्थेश्वर भगवान् व चरण कमलों क अन्दर एक हजार आठ बार
 वन्दन नमस्कार कर परगुण ग्रहण करने का स्वरूप अथात् दूसरा कोई
 भी गुणीजन जिस अन्दर किसी प्रकारका सामान्य या विशेष गुण हो
 उस गुण को सदबुद्धि द्वारा ग्रहण करनेका स्वरूप में इस ग्रन्थ द्वारा
 कहुंगा पूज्यपाद श्री सोमसुन्दर सूरिजी महाराजका गुणप्राप्ति
 जिनहर्षण्णि नामका शिष्य कहता है कि हे देवाणुप्रिय सौभाग्य
 श्री याने अनाय सौभाग्य जो मोक्षरूपी स्थान, प्राप्ति क लिये
 इस ग्रन्थकी रचना कर गुण ग्रहण रूपी मोक्ष साधन कारण कहुंगा,
 हे भव्य जीवों ! अगर तुम लोग अपनी आत्मा का कल्याण करना
 चाहते हो तों मोक्षका प्रथम साधन कारण गुणप्राप्ति को धारण
 करो इसमें ननो कष्टोपासर्जन करना पड़ता है न द्रव्य खर्च कन्ता
 पड़ता है मात्र पहलेसे ही अपना जेबको गुण प्राप्तिता कि तफ
 जता देना चाहिये गुणप्राप्ति पुरषों कि इस भयमे भी दुनियाँ तारीफ
 करती है परभवमे भी वह जीव सहजहीमे अनक गुण प्राप्त कर
 अनाय पदको अपने आधिन कर लेता है ।

॥ कुन्तियो ॥

गुणप्राप्ति वनीये मदा लागत नहीं कुछ मोज ।

अवगुन जोव आपका पामे गुन अनतोला ।

१ पामे गुन जनतोल जगतमें लोक सरावे ।

परभव सुरअवतार आरसीर वह शिवपद पावे ।

कहत कवि कर जोर ज्ञानकि बाते सुनिये ।

लागत नहीं पुच्छ मोल, गुन के माहक बनिये ॥ १ ॥

उत्तम गुणाणु रामो-निवसड हिययमि जस्स पुरिसस्स ।

आतित्य यर पयायो, न दुल्लाह तस्स रिद्धिओ ॥ २ ॥

अर्थ—जिस पुरुषों के हृदय कमल में उत्तमगुणी जनोंक गुणोंका अनुराग सदैव निवास करना हो उस पुरुषका हृदय मानो हजारों गुणोंका एक रजजाना ही है इतना ही नहीं बरक सर्व लोकमें उच्चेसे उच्चा गुण तीर्थकर पदका है वह तीर्थकर पद रूपी जो अद्वि भी उस पुरुषके लीये किसी प्रकारसे दुर्लभ्य नहीं है कारण यह बात तो स्वयस्तिद्ध है कि मनुष्य जीस जीस गुणोंका अनुमोदन करता हो—अनुराग रखता हो वह वह गुण इस भयमें या परभयमें उसे अवश्य मीलता है जय तीर्थकरों के उत्तम गुणोंका अनुराग रखनेवाले गुनमाही पुरुषों को तीर्थकर पद कि अद्वि मीलना कोई दुर्लभ्य नहीं है इस वास्ते भव्य जीवोंको जिस गुणकि जम्मत हो उसी गुणोंपर अनुराग रख गुणी जनोंकि सेवाभक्ति गुण स्तुति उपासन कर उन गुणोंका बार बार अनुमोदन करना चाहिये जैसे एक मनुष्यको ज्ञान गुणकी आवश्यकता है वह मनुष्य ज्ञानी पुरुषोंकि सेवाभक्ति उपासना कर बार बार ज्ञान गुणका अनुमोदन करता हुआ अनुराग धरेंगे तो उसे ज्ञान गुणकि अवश्य प्राप्ति होगी इसी माफीक दुसरे भी हजारों

गुण अनुमोदन करनेवाला व हृदयमें ही वह सगुण निवास करते हैं वहा तक कि तीर्थंकर पद की श्रद्धा भी सुलभतासे मील सकती है इस वास्ते प्रत्येक मनुष्यों को गुणमाही बनना चाहिये ।

ते धन्ना ते पुन्ना, तेसु पणामो हविज्ज मइ निच्च ।

जेसि गुणागुराओ, अकित्तिमो होइ अण वरय ॥ ३ ॥

अर्थ—वह पुरुष जगत् में धन्यवाद के पात्र है वह पुरुष शोकमें पुन्यशाली है अर्थात् पूर्वभवमें जोकि अत्यन्त पुन्य कर अपने हृदय कमलको गुणमाही बनाया था यान गुणमाही पानना अभ्यास पूर्व-भवसे ही कीया हुआ था कि इस भवमें भी वह पूरा अभ्यासकि प्रेरणासे जन्मसे ही गुणमाही बन हजारों दुर्गुणोंसे एक भी गुण हो उसे ग्रहण कर पगुण अनुगामी बन जाते हैं वह मनुष्य कृतार्थ है और भी पुन्योपाजन कर अपने दुर्लभप्राप्त कीया हुआ नरभवको सफल कर रहा है जिस मनुष्योंकी भावना निरन्तर पगुण ग्रहण करनेमें लगी हुई है एसा महान् पुरुषोंको नित्य हमारा नमस्कार हो अर्थात् एस पगुणग्रहण करने वाला मनुष्य दुनियामे चौरास तक वन्दन नमस्कार और पूजा करने योग्य होता है । जस एक गांवडमें एक कपील नामका साधारण मनुष्य महान् वंदना भोगव रहा था उनर कुटुम्बीयोंने बहुतसे पैसोंको जुलवाके बडेही कोरीस व साथ दवाइ उपचार किया पण्णु उस पैमाणे कीसीका भी गुण न होर जीतने हकीम आयेथे उन सत्रे एकेक अवगुण ग्रहण कर अपन हृदयको पूरा भर दीया कीसीको कहा कि यह काना है कीसीको दृढ़ है कीसीको काला है कडवीदवायों दता है इत्यादि न कीसीपर

उमका विश्वास रहा इमी माफीक चीरकाल दुखोंका अनुभव करता रहा फीर एक महात्मा आया उनोसे अपनि दुखकी बात कही उन महात्मान कहा कि हे भद्र ! इस दुखमे कोइ गुण भी तुमने दखा है ? वैमान कहा कि आप भी ठीक बात करते हो क्या दुखम भी कोइ गुण हुवा करता है ? महात्मान कहा कि तुम पहेले गुणमाही पया सीखों तु रम भी बडा भारी गुण रहा हुवा है जैसे कि दुखमें परमेश्वर स्मरण होता है अपने छुटुम्बीयों कि पगिचा होती है दुष्कर्म करनेसे नफरत आति है इत्यादि अनेक गुण है वास्त हे भद्र ! तु पेश्तर गुणमाहीपना सीख, यह सुन वैमाने सोचा कि बात तो ठीक है उम निनसे उन वैमाने गुणमाहीपणा धारणकर जो मनुष्य तो क्या परन्तु हरेक वस्तु क्यों न हो उनोमें जो गुण हो उसे ग्रहन करना सरु कीया आसीर शरीर अच्छा हुवा और जगतमे जीतनी वस्तुवो है उस्मे एउ गुण तो अवश्य है यह सिद्धकर दीया और एवैक मनुष्यादिसे एकेक गुणको ग्रहन कर आप गुणोंका एक रजाना बन दुनियोके सर्व उच्च स्थानको प्राप्तकर जनताके वन्दन पूजनका पात्र बन बडा इस वास्ते प्रत्येक मनुष्योंका कर्तव्य है कि वह हरेक वस्तुवोंसे गुणग्रहन कर ।

किं बहुणा भणिएण, किंवा तविएण किंवा दाणेण ।

एक गुणाणुराय, सिखवह सुखखाण कुल भवण ॥ ४ ॥

अर्थ—जीतनेक मनुष्य ऐसे भी होते है कि बचपयासे ज्ञानाभ्यास करते हुये वृद्ध वय तक पहुचजाते है और तपश्चर्या करनेमे मास

मास ग्रामणावे पारणे करत है दान देनेमें बड़ ही उदार होत है परन्तु परगुण ग्रहण नहीं करत हुवे भी दुसरोँक अवगुणास अपना गजाना भर सेंते है कहा है कि ज्ञानका अजीर्ण अहंकार यान दुमरोँको तुच्छ समान समजना तपश्चयाका अजीर्ण क्रोध यान प्रज्वलीन हो दुमरोँको दबाना क्या मुझे नहीं जानत हो ? दानका अजीर्ण परनिंदा याने मलीचुस कृपण आदिकी निंदा करना ऐसे दुजनोँक लिये आचार्यजी फरमात है कि ह भय जीवो ! जहातक तुमार अन्दर गुणग्राहीपणा नहीं है वहातक तुमारा पढ़ना जिरना आगमोँका पठन पाठन विशाल पग्गिदामें जम्न जम्न भाष्योँका दना मनोरञ्जक कथाबोसे दुनियोँको मोहीन करना तथा उपवासादि छैमास तरकी तपश्चया करना ओर अनेक प्रकारक दान दना यह परगुणग्राहकता विचार मन निष्कल है काग्या ज्ञान ध्यान तपश्चया ओर दानादि क्रिया करत हुवे भी पर अवगुणोँको ग्रहण करने कि जीम मनुष्यमे आदत पड गइ है वो सन क्रियाका फलको एक ही दुगुण वालक भस्म कर देता है इम वाम्ते है भद्र ! पहले गुणानुगम यान परगुणग्रहण करना सीरो याने अपनि आदत पाड दो कि हरक मनुष्यमे उत्तम गुण हो उसे ग्रहण करे कारण यह एकही गुण ण्मा जगदस्त है कि अनाधीन सुखोरूपी कुलक अन्दर भुवन समान है जन सन सुखोँका भुवन ही प्राप्त करलीया नो उस सुख भुवनमे दुसर हजारोँ सुख सहज ही में मीज जायगा ।

जइवि चरसित्त विजल, पढसि सुय करिसि विविह कटाइ ।
न धरसि गुणाणुराय, परेसुता निष्फल सयल ॥ ५ ॥

अर्थ—यद्यपि हे भद्र तु विपुल प्रकार कि तपश्चर्या करेंगे तथा आचारागादि सूत्र सिद्धान्त पढ़ेंगे, पूजन प्रतिलेखन सिंगलोच आसन समाधि ध्यानादि अनेक प्रकारकी कष्ट क्रियाओं करेंगे परन्तु जहानक तेरा ध्यान दुसरे गुणोंकी तरफ नहीं है अर्थात् परगुणानुराग नहीं है तो तर कीया हुआ उक्त सब कष्ट निष्फल है कारण तपके गुणोंपर सूत्रसिद्धान्तके गुणोंपर और दुसर भी अनेक प्रकारके कष्ट क्रियाओंके गुणोंपर भी तो तेरा राग नहीं है अगर उक्त क्रियाओंपर राग होगा तो दुसर भी उक्त क्रियाओं करनेवालों पर भी तग अवश्य राग होगा ही, जब दुसर मनुष्य तपश्चर्या करनेवाले सूत्रसिद्धान्त पढ़नेवाले और दुसर भी अनेक गुणोंके धन वाले पर तेरा अनुराग नहीं है तो फिर उक्त क्रियाओंपर तेरा अनुराग कहाँ आया अगर यह कहा जाय की जो मैं करता हू उस कष्ट क्रियापर मेरा राग नहीं है तो वह कष्ट कैसे किया जावे ? हे भद्र यह तो परिमर्हीत क्रियाओं पर अपना मोह है उसमे हेतु यह है कि मैं करता हू वह ठीक है और दुसरा करता है वह खराब है इसको गुणानुराग नहीं कहा जाता है इसे तो एक कौस्मिका दृष्टिहीनता कहते हैं जैसे लाभार्थी वैपारी लोग अपने मालकों अच्छा सुन्दर वतलाता हुआ अपने गुण गाने है वह ही माल दुसरे वैपारीके पास है उनके लिये अनेक दुर्गुण वतलाते है तो उन वैपारीको उन वस्तुके गुणोंपर राग नहीं है किन्तु अपना स्वाध साधन कर पैसा पैदा करनेका है इसी वाग्ने दुनियोंमें अपने महत्व बढ़ाने-वाले तपश्चर्या करते है सूत्र पढ़ते है और भी अनेक कष्ट उठाते है उसमे मूल हेतु वह ही है कि दुनियोंमें हम दुसरसे

अधिक तारीफवाले हो दुनियोसे पूजा करवाये इत्यादि न्याय युक्त वह मय कष्ट क्रिया एक कीम्मेका दृष्टवाद है इस वास्त में मनुष्य परगुणग्रहण विग्न जो तप जप ज्ञान ध्यान करता है वह सत्र निष्फल है इसलिये मोक्षार्थी पुरुषोंको तपश्चर्या करते हुवे सूत्रसिद्धान्त पढ़ते हुवे भी परगुणग्रहण करनेमें अधिक प्रयत्न करना चाहिये तब वह किये हुवे मय कष्ट क्रिया सफलताको प्राप्त हो जैसे शृंगार कीया हुआ सुन्दर पुरुष अधिक शोभा पाता है इसी माफीक मनुष्य परगुणग्रहण करनेसे किया हुआ तप सयमादि सफलार्थ अधिक शोभाको या फलको प्राप्त होते हैं वास्ते सुगर्वाभीभाइयोंको सदैव गुणमाहीपणाही रखना चाहिये ।

सोडण गुणुकरिस, अबस करसि मच्छर जइवि ।

ता नूण ससार, पराहव सहसि सज्जत्य ॥ ६ ॥

अर्थ—ससारक अन्दर कीतनेक पसभी जीव हुवा करते है कि दुसरोका गुण न ग्रहण कर दुसरोकी प्रशंसा श्रवण न कर वजटे मच्छर-भाव यान ईपा करत है उन महानुभावोंको आचार्यत्री कहेत है कि हे देवानुप्रीय ! दुसरोके गुणोंकि प्रशंसा श्रवण कर अगर तु मच्छरभाव—ईपा द्वेषभावजानगा तो तु तरी आत्माको निश्रय कर दुर्गतिके अन्दर गीरानेकाही प्रयत्न करगा और उन रराश भावोंके कारण पर भवमें जहा आवेगा वहाही परामत्र पावेगा अथात् जीस गुणोंके लिये तु इसभयमें मच्छरभाव लावेगा वह गुण भवान्तरमें तरे को मीलना मुश्किल होगा इसभवमें भी कोई सज्जन समजदार मनुष्यके पास जाक तु एक गुणीजनमे इपा और मच्छरभाव दरसावेगा तो वह स-

मजदर तेरी कितनी किंमत करेगा, बल्के सज्जन तो यह बन्दुकी सम-
जलेगा कि यह परगुणद्रोही एक खल आदमी है हे भद्र ! तु तेर दी-
छमें विचार कर कि दुसर आदमियोंक गुणोंसे इया करनेसे तेरकों
क्या फायदा है ? इस भवमें तो अच्छा मनुष्य तरको पाममी नहीं
बठावगा और तरपर विश्वासतकमी नहीं रखेगा परभयमें तुजे वह गुण
मीलना दुष्कर होगा भले तु कीमीसे ईर्ष्याद्वेषभी रखेगा तो इसे
होगा क्या ? अगर दुमगोका प्रयत्नपुन्य है वह तो तरस नष्ट हो नहीं
सम्ता है अगर तु हजागे प्रकारमे उसको नुकसान पहुचाना चाहे
परन्तु उनके पुन्योदय जीतना तुमारा प्रयत्न है वह सन फायदाके लिये
ही होगा—वास्ते अगर तु तग इस भयमें भला चाहता हो तो दुसरोके
गुणोंसे मच्छरुता ईर्ष्या और द्वेषको त्याग और गुणप्राप्तीपय्याको धार
याकर ताक वहगुण सहजमें तुम्हे प्राप्त होगा ।

गुणवताण नराण, इसाभर तिमिर पूरिओ भणसि ।

जइ रुइवि दोस लेस, ता भमसि भवे अपारमि ॥ ६ ॥

अर्थ—समारी सन जीवों कमानुसार सुखदुःख भोगवते हुव अनेक
प्रकारके कारण पा के नयेनये शुभाशुभ कर्मोंपार्जन करत हैं इसवास्ते
शास्त्रफारोने कहा है कि समारी जीव न एकान्त सर्व अगुणोंवाले हैं
कीमीके अन्दर गुण ज्यादा है और अगुण कम है और किसी के
अन्दर अवगुण ज्यादा है और गुण स्वल्प है जहा मुन्य है वहा
पापमी मौजुद है जहा पाप है वहा पुन्यभी मौजुद है जैसे सर्वार्थसिद्ध
बैमानवासी देव प्राय पुन्यवान है बाहुल्यता पुन्यही भोगवते है किन्तु

ज्ञानार्थियादि पापकर्मभी गौणत्वमें भोगवन है इसी माफीक सानवी नरकव नैरिय पापवान् बाहुल्यता पापकर्म भोगव रहते परन्तु बादरपण्या असपण्या बैक्रियशरीर इत्यादि गौणत्वमें पुन्यको भी भोगवना है इसवास्ते ससारनिवासी जीवोंमें बहुत गुण हो वहा किंचिद् अवगुणभी होत है और बहुत अवगुण हो वहा किंचिद् गुणभी होत है हे भद्र ! अगर कोई गुणीजनर अन्ध तु इयाभावर अन्धकारमें गीराहुवा किंचिद्भी अवगुणको ग्रहण करेंगे उस अवगुणनि अपत्ता निदाद्वेष करेंगे और दुष्टभावोसे उस अवगुणपर गुणीजनोका निगम्यकार करगा तो इस आगपार ससारव अन्धर पश्चिन्न मन करनेवाही रहस्कारों प्राप्तपर महान् दुःखी होगा जैसे एक सुनन्द नामका आचार्य था उतोंव अन्धर ज्ञान ध्यान तपश्चयादि अनक गुण होनपर एक क्रोधका अवगुणभी था उम आचार्यश्रीक ऊपासक एक शिष्य था वह आचार्य पास पढ़ता था क्रमश अच्छा विद्वान होगया फीर कारण पार उम आचार्यके क्रोधको ग्रहण कर इपाव मार जोगोंको फेंहने लगा कि यह आचार्य बडाही क्रोधी है यह सुन आचार्यको अधिक अग्नि पदा हुई और कहने लगा कि मने इस शिष्यको ज्ञान दन एक सर्पको दुध पीलाया है एव आचार्य और शिष्यक आपसमें द्वेषभाव बढना गया शिष्य कृमज्जी हो आचा यश्रीका एक दुर्गुण देरनेसे हजारो दुसर दुर्गुण अपन आमन्त्रण कर एकत्र कर लिय और अपन दृष्टिगोी अन्ध मस्तोकोभी उन दुर्गुणोकी प्रसादि दफे अवगुणोपासक बना दीये और आचार्यश्रीकी आत्माको भी मज्जीन बनादि जीतन जीव दोनो पक्षमें बन्ध थ उन सवन अपने

आत्माका कल्याणको मुल दुर्गति जानेका प्रखर प्रयत्नकर भविष्यमें उन दुखो का चीरकाल अनुभवकीया इसवास्ते हे भव्यजीवो ! अगर अपना भला चाहने हो तो कीसीके गुणोपर ईपा द्वेष मच्छरता न करके गुणोकोही ग्रहन करो अगर दुसरोमें किसी प्रकारका किंचित अवगुणभी होगा तो उनोंकि आत्माको नुकशानि है अपनेको क्या नुकशान है ऐसा समझके अपनेकोतो किसिके अन्दर किंचित्भी गुण हो उसेही ग्रहन करनेकि बुद्धि रखना चाहिये ।

जन्मसेई जीवो, गुण च दोष च इत्य जम्ममि ।

त परलोए पावइ. अम्भासेण पुणो तेण ॥ = ॥

अर्थ—हे मनुष्यों ! जीव जीस बातोंका अभ्यास करता है वह ही बातें भवान्तरमें पैदा करता है अर्थात् वह वानें सुगमतासे प्राप्त हाती है जैसे चित्रकारका अभ्यास करनेसे जीवको चित्रकला प्राप्त होती है ऐसे जीस जीस कलाओका अभ्यास करता है वह वह कलाओ प्राप्त हो जाती है इसी माफीक पूर्वभवोंमें जीस जीस बातोंका अधिक नजदीक अभ्यास कीया है वह वह बातें इस भवमें मील जाती हैं वसी बातें पर ज्यादा अनुगम हाता है एक साहुकारक च्यार पुत्र थे परन्तु उनोंकि रुची च्यारोको अलग अलग थी यह पूर्वभवोंके अभ्यासका ही कारण हैं एक उध कुलमें जन्मा हुवा मनुष्य निच कार्यको पसद करता है एक निच कुलमें जन्मा हुवा मनुष्य उध कार्यका पसद करता है यह सब पूर्वभवोंके अभ्यासकाही फल हैं इसी माफीक इस भवमें जीव जीस बातोंका अभ्यास करता है वहही भवान्तरमें

मीलता है अगर इस भवमें दूसराकि निंदा इषा करेगा उसे भवान्तर-
में भी वहही बातोंसे अधिक राग होगा तथा इस भवमें परगुणग्रहण करेगा
उसे भवान्तरमें भी परगुणोंपर राग होगा इस वास्त हरक भाइयोंको
इस भवमें अच्छा हितकारी अभ्यास करना चाहिय कि परभवमें भी
वह हितकारी अभ्यास बना रहे जीनोंसे परम्परा मोक्षकि प्राप्ति हो इस
वास्ते सत्सा करो परगुणोंको ग्रहण करो दान दो तपस्या करो
प्रभुपूजा करो स्वाधर्मी भाइयोंसे वात्सल्यता रखो हरक दीन दुःखीका
देख अनुकम्पा लावो इत्यादि अच्छे कार्योंका अभ्यास करो ताब
अविष्यमें भी तुमको वह ही कार्यो कि सुख पूरक प्राप्ति हो ।

जो जपइ पर दोसे, गुण सय भरिओ वि मच्छर भरेण ।

सो विउसाणम सारो, पलाल पुजव पडिमाइ ॥ ६ ॥

अर्थ—जो मनुष्य बहुत परिश्रम करके आप सैकड़ों गुणों कि
प्राप्ति करी है अर्थात् एक मनुष्यमें सैकड़ों उत्तम गुण भरा है परन्तु
दुसर व गुणोंको ग्रहण न करके मच्छरता—ईपाको धारणकर दुसगोंका
दोषको ग्रहण करता हो वह अनक गुण सयुक्त भी विद्वानो कि सभामें
शौभा नहीं पाता है कारण दुसगोंका दोषग्रहण ग्रहण करनेसे अपने
हजारों गुणोंका नाश होता है जैसे हजारमण्य रूद्र के अन्दर अग्निका
एक तुणगीयाको रख देनेसे वह हजारमण्यरूद्रको धाजके भस्म कर
देता है इसी भाँतीक गुणीजनको दुसगोंका दोषग्रहण के सामने नहीं
देखना चाहिये जैसे मथुरानगरीमें एक लक्ष्मीपति सठ रहताया वह
अपनि बस परम्परास दुनियोंमअपनि यश कीर्ति चोतर्फ फैला रखीथी

और भी दया दान जमा सत्यतादि अनेक गुणोंका उपासक था उस सेठकी दुकानके पास एक पान बेचनेवाला तबोली रहताथा उसने अन्तर व्यभीचारीपणाका बड़ाभागी दुर्गुण था यह सेठजी के देखनेमें आया शास्त्रकारोंका फरमान है कि हरक भली बुरी बातों को जानना यह ज्ञानावर्णिय कर्म का क्षयोशम है अगर दूसरा मनुष्य हितशिक्षा मानता हो तो उसे शिक्षा देना यह सज्जनता है अगर दूसरेको हलका पाडनेको उनका दोषको प्रकाशित करना यह निच मनुष्योंका कर्तव्य है ^१ सेठजीने उन तानोलीये दुर्गुण को जान फ कीसी कीसी आदमियों क आगे प्रकाशित कीया वह बात तानोलीने सुनि, तब तानोलीने सेठजी की निंदा करना सुरू कीया सेठजी आपनि निंदा महन न कर सरे तब क्रोधको आमन्त्रण कीया तानोलीको दो ध्यार गाली दी इतनेमें तों मान आया सेठजी आप बड़ा होनेका दावा अभिमान करत हुये तानोली के छीद्र देखने लगे इतनमें तो मायान आ क सेठजी के हृदयमें निवास कीया इससे सेठजी जाल गुथना सुरू कीया तो उसी बरन् तीनो फ सीखदार लोभ आया सेठजीने विचार कीया की किसी उपायसे तानोली की दुकान खरीद कर इसे यहांसे निराज देना ठीक है तानोली भी सेठजीसे सामना कीया दोनोंमें सदैव तकरार चलनी सुरू हुई जीनसे सेठजी अपना धन्या रुजगार वाणिज्य बेपार और आपनि इज्जत तक को भी भुज गये सेठजी क कुटुम्बवाले तथा सज्जन मन्धी कहने लगे कि सेठजी ! आप कीस इज्जत के आदमि हो और यह तानोली कुजडा कीस इज्जतका है क्या आप ईससे जटते ठीक दीखते हो ! परन्तु सेठजी

क पीच्छाही तो चढाज चौकडी लगी हुई थी वह सत्य मार्ग दरने भी क्यों दवे आखीर सठजीने बडी मुशियतोंस हजारो गुणोंको धीर कालमें पैदा कीयाया वह एक ताबोली क दुगुण प्रकाशित करनेमें स्वल्प समयमें सब क मर गुण गमा के दुगुणीअन वेठे जो कोई अच्छा मनुष्य सेठजी को हित शिना दे उनो के माय ही प्रोध मान माया जोभ इर्षा द्वेष करने को तैयार हो जावे आखीर दुनियो काले नागस हर उनम भी सेठजीसे अधिक डग्न लग गइ सेठजी अन्तमें काल कर एक सर्प योनि क अन्दर निवास कीया ह भव्यात्मावों ! देखिये लक्ष्मीपति सेठ क अन्तर हजारो गुण होने पर भी एक ताबोली क दुगुण को महन-प्रकाशित करनेसे अपने प्राप्त किये हुवे हजारो गुण सहजहीमें गये क और भी सप योनिको प्राप्त करी है इन बास्ते आप कीसी प्राणीका दुर्गुण को मत दरो जीस्व दुर्गुण होगा उसको नुकशान है आप तो अपने कों गुण दीसना हो तो उस महन करो इसमें ही आपका भला है ।

जो परदोसे गिरहइ, सतासत वि दुष्ट भायेख ।

सो अप्पाण वधइ, पायेख निरत्थ एणा वि ॥ १० ॥

अर्थ—जो कोई मनुष्यप्रकृति के आधिन हो दुसरो क गुणों को तों महन नहीं करते है किन्तु दुसरो क छना या अच्छना दोषोंको महन कर अपनि आत्मा को पापकर्म रूपी पासमें बन्ध कर निर-यक ससार रूपी महान समुद्रम डाल रहे है उन जीवों को यह मोचना चाहिये कि कासी दुसर्ग क अन्दर दुगुण है भी सही तों

जो के लिये भी शास्त्रकार मना करता है कि दूसरों के अङ्गुण
 तुम को निश्चिन्त भी नुस्खान नहीं करना है तो फिर तु दुसरे के अङ्ग-
 गुण खरीद कर अपनी आत्माको क्यों मारी करता है जैसे एक
 बैपारी कि दुकानपर बिदेशी कापड़ बहुत भरा हुआ है जिसको कोई
 भी खरीद नहीं करता है उसके जहा रहा उसका निरस्कार ही होता है
 दुसरा खाने के कपड़े के हजारों ग्राहक आते हैं परन्तु उन बैपा-
 रीकी दुकानमें वह खरीद नहीं है तो अब वह बैपारी कीम कपड़े की
 खरीदी करेगा क्या बिदेशी कपड़े की या खरीद के कपड़ों कि अगर समज-
 दा बैपारी होगा तो जीस मालकि ज्यादा रिची है वह माल अपनी
 दुकानमें नहीं है उसकी ही खरीदी करेगा, तब ही वह लाभ उठा
 लेगा इन्हीं माफीक दुर्गुणरूपी बिदेशी कपड़ तो पहलेमें ही तुमारी
 आत्मारूपी दुकानमें बहुतमा भरा हुआ है जीसको कोई भी सज्जन खरीद
 नहीं करता है और शुद्ध स्यादी के कपड़ रूपी गुण तेरी आत्मामें
 मेलप भी नहीं है और जेने ग्राहक बहुतमें आते हैं तो तुम्हें खरीदी भी
 वसी गुणोंकी कमी चाहिये ताकि भविष्यमें भला हो जब किसी मनुष्य
 क अन्दर दोष है भी रही तो जेने लिये भी वह अवगुण ग्रहण करना
 विवशना मना है तो कीमीपर रिग्न कर अछूते दूषणोंका आरोप
 कर देना यह कीतना बड़ा भारी पाप है क्या दुसरेपर असत्याक्षेप
 कर देनेसे अपना आत्मा दुःख न पाता होगा ? उम दुःख पानेका बहुत
 फल भविष्यमें असत्याक्षेप करनेवाले को भोगना नहीं पडगा । ह
 भद्र । एक पोतनपुरनगर के अन्दर वाल विधवा गेहयाई बाई अपनी

भैंस को जगलमें गालन को जा रही थी रोहणी कुच्छ पीच्छाडीथी भैंस एक कोनम निरुध के दुसर मठके घग्घार पर गोबर फीयाथा सुन्दर शेठाणीन उस गोबरको दूर के घरके अन्दर गइ इननम पीच्छेमे रोहणी आके उस गोबर को उठा के चलती हुई फीर सुन्दर शेठाणी आइ गोबर न दग्नसे उम रोहनी को गाली द के कटुक बचनोसे बोली रे धरया लपटा मर दया हुवा गोबर कैसे लेगइ इन अक्षत दोष प्रकाशका यह पत्र हुवा कि उन सुन्दर शेठाणीने दश भव लग तार वैरयाका भव कर लगना को मोगर के ससारमें परिभ्रमन करना पडा इस वास्तव भ्रम जोशे 'कीसी भी मनु यमें छना हो के अइहा पान्तु दुमगोवा नोयणको नो कीसी प्रकारसे ग्रहन न करना चाहिय दोषण ग्रहन कानर्म कीमी मनुष्यका कीसी प्रकारका स्वार्थ भी नही होना है तो विगर स्वार्थ कमवान्यके भवातरमे दुखी होना कीसी प्रकारसे ठीक नही है वास्तव प्रथम गुणपाही बनो ।

त नियमा मुत्तव्य, जसो उपज्जए कसायग्गी ।

त वयु धारिज्जा, जेणोयसमो कसायाण ॥ ११ ॥

अर्थ—हे मय ! जिस प्रवृत्ति व कारण से स्वय अपनी आत्मा को या पर आत्मावाक कपाय रूपी अग्नि पदा होती हो उस प्रवृत्ति को निश्चयकर शीघ्रनापूर्वक त्याग करो कारण कपाय याने क्रोध मान माया और लोभ यह मसार रूपी वृत्त के मूल बीज है शेष पाप इन वृत्त कि शाखा प्रनिशाखा पर पुष्प है नरक निगोद व घोर दुरर इस वृत्त व फल है जहा तक कपाय पत्रजा नही पडा

हो वहानक सर्व ऋष्टक्रिया निष्फल है कपायोत्पत्ति व कारण—शरीर ओपनि क्षेत्र वस्तु—धन धान्यादि तथा कुटुम्ब परिवार जो है पहले इनो म भमत्वभाव कम करो इनोका मयोग को शनै गनै छोड़ो गहो कारण निमित्त कारण से आत्मा शुभाशुभ प्रवृत्ति कीया करता है चाह एक माम तक क्रोधी मनुष्य व पाम रह जाइये अगर रहनेवाले में क्रोधी से भी शान्तगुण अधिक होगा तो वह क्रोधी कों भी शान्त बना देगा या शान्ति करने वालेसे भी क्रोधी में क्रोध गुण अधिक होगा तो वह शान्त को भी क्रोधी बना देगा इस वास्त पहले से ही निमित्त कारण अच्छा रखना चाहिये कि उन क्रोधादि कपाय का प्रवेश तुमारी आत्मा में हो ही न सके । अगर अनादि काल से जगी हुई प्रीति व कारण कपायादिका मज्जोग हो तो भी तुम को एसी वस्तुको धारण करना चाहिये कि जिनसे उदय या सत्ता कपाय का भी उपशम हो एसी वस्तु मुनियों के पास ज्ञानीयोंके पास शान्त प्रवृत्ति-वालोंके पास मीलनी है वाम्त पेस्तर उन महात्मावों कि सगत करो वह तुमको वीतराग वाणि का शान्त जल से तेरी कपाय अभिषेक शीघ्र शान्ति कर देगा जैसे एक शान्त स्वभावी गुरु महागज क्रोधी शिष्य का भग कर गोचरी गये थे मृत्यु देहकीपर गुरु का पाव लग जान से क्रोधी शिष्यने कहा कि गुरुजी आपने देहकी मारी है इसका प्रायश्चित्त जो इत्यादि गुरुजी ने बहुत शान्ति रखने पर भी निमित्त रगव होने से गुरुजी कों गुम्ता आया पत्थर हाथम लेके शिष्यको मारने कों जाता था उसी पत्थर कि चोटसे आप मृत्यु पाक चढकोपीया सप हुवा क्रोधी वस हो साधु धर्म रगे के

मप हुवा मप क मपमे शान्त गुणधामक भगवान वीर प्रभुका मरणा लेन मे आठम स्वर्ग म निराम कीया इस वास्त कथायोत्पत्ति क कारण ओइय कथाय शान्ति क कारणो को धारण करे । शान्त गुण वालो कि मगत करे तार शान्त गुणो कि प्राप्ती हो ।

जइ इच्छह गुरयत्त, तिहुयण मज्झमि अप्पणो नियमा ।
ता सव्व पयत्तेण, परत्तेस विवज्जण इण्ह ॥ १२ ॥

अर्थ—इस ममार क अन्दर मामान्य स लेकर विरोध जीव अपना अपना महत्व बढान कि यान मर दुनियोम नड होन कि इच्छा रगत है अथान छोड छोड मनुष्य भी बडा होन की कोशीस कीया करत है पण्णु दुनियो म बड होन क कारण क्या है उम प्राप्त करन कि कोशीस स्यान् ही कोड मनुष्य करत होगे कीतनक भाइ धन एकत्र कर दुनियोम बडा होना चाहत है कीतनक दुमगे का अपमान निस्कार कर आप बडा बनना चाहत है कितनक क्रोधकर शान्त मनुष्यों को दुना दनमें ही अपना बडाइ मान बढने है कितनक राजम मगड जगड क कीतनक बड बड महान बन्धा क कीतनक मालभग्मे पाच भाग हजार रुपीये रख कर कीतनक धन क नामस और कीतनक अपना पक्ष बडा क दुनिया म बड होन चाहत है पण्णु यह सब कैमा है कि जेम रिपमिश्रित पक्षानानि स्वल्प काल क लिये मान भी लिया जाय क बहुत स लोग उन बडा मान भी लिया पण्णु आखीरम क बडापणा कहातक ? जवनक पूर मरक पुन्य है वहातक । फीर तो पुन्य नाशका कारण

मीलनमें रजाना खुट जायेंगे तब राजा गवण कि माफीक अपनि
 गुहना छोडना ही पड़े गा आचार्य श्री फरमाते हैं कि हे सुगमि-
 लापी भय । अगर तुमको सचा दीलस गुहना धारण करनी हो तो
 अबल तु यह प्रयत्न कर कि दुसरो का दोषों को मन करके भी
 नहीं दखना अर्थात् दुसरो कि निंदा नहीं करना दुसरो के साथ
 ईषा मच्छरता नहीं रखना जब तब अन्दर यह परित्र गुण आ जायगा
 तब दुनियोम निचसे निच कर्तव्य जो परदोष ग्रहन का था वह छुट
 जायगा यह निच कर्तव्य छुट जाने स परगुण ग्रहन करने का नो
 उचा स उचा गुण है वह तुम्हें सहजही मील जायगा कारण ममारी
 जीजों की यह प्रवृत्ति तो स्वभावसे ही है कि कीमी न कीसी प्रकारस
 दुसरो का स्वभाव को ग्रहन करना अगर परमोपण ग्रहन करेगा तो
 परगुण ग्रहन न होगा और परगुण ग्रहन करने का स्वभाव यह
 जायगा तो परदोषण के सामन तर भी नहीं दखेगा हक स्थान
 में एक ही वस्तु ठर सकेगी चाह गुण चाहे अरगुण इन वाम्त तु
 परदोषण ग्रहनरूप निचवृत्ति का शीघ्र त्याग कर जिनसे मरे
 ससार कि पढियासे तुम्हें उच पढि मीलेगा आलीर मोक्षनगर का
 राज तर भी मील जायगा जिनने जीव ससारमें बड कहलात है
 वह मन परमोपणो का त्याग कर के ही हुब है ।

चउहा पससणिज्जा, पुरिसा सब्बुत्तमुत्तमा लोए ।

उत्तम उत्तम उत्तम, मज्झिम भावय सब्बेसि ॥ १३ ॥

अर्थ—परमोपण त्याग और परगुण ग्रहन करने स अनक

गुण प्राप्त होत है वह गुणी जन इस जगत्क अन्तर परित्र गीने जात है प्रशंसा कर्म योग्य होत है इस वास्त प्रशंसनिय पुरुषो कि उत्तमता धनलाने को आचार्य श्री कर्मात है कि है महानुभाव । इस ममारके अन्तर ध्या प्रकार क पुरुष जो (१) सर्वोत्तमोत्तम (=) उत्तमोत्तम (३) उत्तम (४) मध्यम यह ध्या प्रकार क पुरुष अपने उत्तम गुणों से दुनियो में प्रशसनीय है ।

जे अहम अहम अहमा, गुरु कम्मा धम्म वज्जिपा पुरिसा ।
ते बिण न निंदयिञ्जा, किंतु दया तेसु कायञ्जा ॥१४॥

अर्थ—पाचव अधम ओर छटा अधमाधम जो गुरु कमी मथा धम वज्जिन थान धर्मरहित मूरमी अनक प्रकारक अधम करनेवाले पापिष्टोको दस उन अधमी पुरुषाकि भी निंदा नहीं करनी चाहिये किन्तु उन अधमी जीवोंको दस उनोंपर त्या भार लाना उत्तम पुरुषोंका कर्तव्य है अगर अपन अन्तर इतनी योग्यता हो कि मधुर वचनोद्गार निशिन्ना द उनोंम वह अधमी वृत्ति छोडा मर अगर रहनपर भी वह अपनि पापवृत्तिको न छोड तो यह ममजना कि यह निचारा क्या कर इनक पूर्वभवमे ऐसे ही कर्मोपाजन कीया हुआ है- कीसी प्रकारम यह जीव गहस्त पर भार अन्तर कम कर तो ठीक है माधम यह भी ख्याल रख कि वह दुगुण मेरमे न आ जाये कोतनेक अज्ञान लोग दुसरेको अनुचित कार्य करते हुए दस आप उनकी निंदा करत है, अपमान करत है, निम्कार करते है पीर उमी कार्योंको आप स्वय सवन करते है इसका फल यह होता है कि

आप दोषीत होने से दुसर आदमि उनोका कहना न मानके उस दुर्गुणक कार्य करन मे और भी मजबुत बन जाते है उनका कारण निंदा करनेवाला बन जाता है और निंदा करनेवालेमे वह ही दुर्गुण भविष्यमें प्राप्त हो जाता है इसास्त चाहे नसा भी अधर्मी क्यों न हो परन्तु उसकी भी निंदा तो कीमी हालतमे न करना चाहिये उस पर तो दया भाव ही रखना चाहिये

पञ्चगुण्ड जुव्वा, वतीण सुर हि सार देहाणु ।

जुर्इण मज्झगओ, सब्बुत्तम रववतीण ॥ १५ ॥

अर्थ—सर्वोत्तमोत्तम पुरुषोंक लक्षण यतजात है कि वह कैसे ब्रह्मचर्यको धारण कर अपन मनकि मजबुती रखत है कि जो तारुण्य युवा स्त्रियों जीनोंक सर्व अगमे विकारक चिन्ह प्रगट हुवा हो जोवन परिपश्य और शरीरका सुन्दराकार से अप्सरावोंको भी लज्जित करनेवाली हो, रूपलावण्य कर मुरमुन्दगीयोंका भी पराजय कर दीया हो, यदनविलास मनोहर नयन काम कदलीगृह इत्यादि मोहनरेखि रूप स्त्रियोंके अन्दर निवास करत हुवे भी अपना ब्रह्मचर्यरूप चिंतामणि रत्नका यत्न कीस रीती से करते है वह आगेकि गायामे बनजाते है

आ जम्म वमयारी, मणवयकाएहि जो धरड सील ।

सब्बुत्तमुत्तम पण, सो पुरिसो सब्ब नमणिज्जो ॥ १६ ॥

अर्थ—जो पुरुष मनुष्यावतार धारण कर जन्मसे ब्रह्मचारी है वह पहले यतजाइ हुइ तारुण्य ओरतोंक निच रहा हुआ मन वचन कायासे ब्रह्मचर्यधन पालन करना है अर्थात् उन ब्रह्मचारी पुरुषोंक

आग कामदर भी लज्जित हो अपने शस्त्रांगों वापिस रख लेते हैं
 एसे महान् पुण्योक्तो मन्वुत्तमोत्तम पुण्य कहा जा सके हैं, वह विश्व-
 त्रयमें परम पूजनीय होत है जैसे विजयकुवर विजयाकुवरीने आ-
 जन्मान्त तक एक शय्यामें निवास करत हुए भी अग्रद्वित प्रह्लादचर्य
 व्रतों पालन कर अपन अग्रणीत पुत्र्योक्त कीर्तिमय दुनियोंमें रोप
 गये हैं, जिसका नाम लेनस ही भयात्माओंका कथाया होत है
 प्रह्लादचर्य पालन करनेवालोंको कल्याणका राग्य हो इस्में क्या आश्चर्य
 है किन्तु उन महान् पुण्योक्त दर्शन करनेवालोंके हजारे गेग नष्ट हो
 जात है जिस कि इस भाग्यभूमि भूषणरूप नन्दपुर नामका नगर
 अदर पुण्यरतु नामका मठ था इनके यशोमति नामकी मुसीला
 भाया थी वह दोनों आनन्दधर्म प्रतिपालन करना सग मनोपी थे उन
 उत्तम दम्पति से एक पुत्र उत्त पदा हुआ जितका नाम कुलचन्द्र रखा
 था पूराभ्यास से वह नालप्रह्लादचारी अवस्थाम कीकर पचसीस वर्ष
 तक मन ध्यान कथास प्रह्लादचर्य पालन कीया जिनसे उनका परित्र
 शरीरकी कान्ती दृग्गन्त भी सम्म नहीं कर सके थे अन्त शरीरका
 स्पर्श भी दुनियोंके गेग नष्ट करनेके लिये एक परम औषधि हो गई
 थी यह बात नगरमें रगर होनसे एलशुभ सेंकड़ों वैमार कुलचन्द्रके
 चरणका स्पर्श कर निगेग होने लगा इसपर कुलचन्द्रन सोचा कि यह
 रजगाय मर प्रह्लादचर्य लिये ठीक नहीं है क्योंकि ' अतिपरिचयाड-
 वणा ' होनसे कभी न कभी लुक्शान ही है इस विचार से अपन
 महान्तो बन्ध कर अन्तर बठ गया, दूसरे दिन सेंकड़ों वैमार आये
 पुत्राङ्गीका दर्शन स्पर्शन न होनसे वह लोग निगम होन लगे इतनेमें

सेठजीने अपने पुत्र ग्त्नसे कहा कि हे कुलचन्द्र यह उपकारका काम तुम्हें अवश्य ही करना चाहिये इत्यादि जब कुलचन्द्र अपने मकानकी एक बारी खोल कर वैमारको दर्शन दिये वह वैमार लोग उन बाल ब्रह्मचारी महा पवित्र पुरुषका दर्शन करते ही अपने दुष्ट रोगको नष्ट कर अपने अपने स्थान चले गये, ग्य बीरकाल तक दुनियोंका उद्धार कर अन्तमें श्रीक्षान्तन ग्रहन कर सहजमें अप्ठकर्मोंका कार्य कर अन्तमें सुखमें विराजमान हो गये सर्व व्रतोंमें ब्रह्मचर्यव्रत श्रेष्ठ है ब्रह्मचर्य व्रतसे रोग, शोक, दुःख, दाग्नि, जन्म मरणादि अनेक दुःखोंका अन्त जाना है जो पुरुष जन्मान्त इस व्रतकी आराधना करते हैं वह निश्चय प्रशंसनीय हो अन्तमें मिष्ट स्वरूप धारण कर सुखी होता है ।

एव मिह जुवइ गध्रों, जो रागीहुज्ज कहवि इग समय ।

बीय समयमि निद्रइ, त पाव सव्व भावण ॥ १७ ॥

जम्ममि तम्मि न पुणो, इविज्ज रागो मणमि जस्स कपा ।

सो होइ उत्तमुत्तम, खवो पुरिसो महासत्तो ॥ १८ ॥

अर्थ—दुम्भ उत्तमोत्तम पुरुषोंके गुण बनजात हैं शास्त्रकारोंने पहलेसे ही फरमाया है कि ब्रह्मचारी पुरुषोंको महीला परिचय तो यिक्तकुल करना ही नहीं चाहिये कारण स्त्रियोंके रोमरोममें काम रूपी विष भरा हुआ है जीनोंको दरपते ही गगभावथा चित्र गढ़ा हो जाना है आचार्यश्री फरमाते हैं कि कदाच युवा, तारुण्य, रूप, जोयन, लावण्य, रूपान्त और विभक्त्याभी सुन्दरीयोंको देख ब्रह्मचारी पुरुष एक क्षणमात्र उन महीलाओं कि तर्क रागचित्तवाला हो

भी जाव परन्तु दुसरी क्षणम उन अनन समार भ्रमन करानेवाले
 अग्रहचार्यरूपी दुर्गुणासे पीच्छा हट उसकी निम्न थाने आलोचना
 कर कि हे जीव ! इस किंपाकपक्षरूपी मैथुनादि त्रिपय सेवन कर-
 नेसे तु अनन्त काल तक ससारमें परिभ्रमण कर नरक निगोदध अग-
 म्य दुःशोका सेवन कीया है यह क्षणमात्रक सुखोंके लिये जो
 हजारों मुशिननोंस प्राप्त किया हुआ ब्रह्मचर्यरूप अमूल्य सुख रक्षा-
 नाकों खोनेको तैयार हो गया इत्यादि शुभ विचारोंसे अपने निजान-
 न्दको समजाव उन क्षणमात्रके भ्रम परिणामों कि आलोचना निन्दना
 गहन कर फीर ताम उम्मेर-जन्मभरमे उस विकारवाली ओगर्तों कि
 नक राग न करनेवालोंको भी शास्त्रकागन उत्तमोत्तम पुरुष माना है वह
 महामत्तावाला वीर पुरुष कहलात हुन फीर जन्मभर एमा दुष्टगण करी
 भी नही जाने यह दुमरा पुरुष भी जगत्त जीवोंको वन्दन पूजन
 करन योग प्रशमनिय-महासत्त्ववाले होत है जैस पूणानन्द नामका
 श्रेष्ठ पुत्र बाल्यावस्थाम ब्रह्मचर्य व्रत धारक सुरक बयमें श्री शुभद
 साचार्यके पास दीक्षा ग्रहण कर एकादशागाध्ययन कर जगलमे
 प्रतिमा धारण कर तपश्चर्या करन लगा बहापर एक कामातुर चन्द्रका-
 न्ता नाम कि विगाधरणी आये उन मुनिस कामप्रार्थना करती हुई अनेक
 हावभाव पूरक मन्त्रिा चरित्र दर्यानका प्रयत्न कीया परन्तु ब्रह्मचर्य
 आगे विचारा कामन्त्रका सत्त्व कहा तक टोक सक ? फीर विगाध
 प्रयोगसे उन चन्द्रकान्ताने बहुतसे विलापस अपनि काम चेष्टा दीखाइ
 उन समय पूणानन्द मुनिक मनन अन्तर महीला कि तफ किंचित्
 गग होते ही मुनिन मोचा कि अहो आश्चर्य कर्मगति विचित्र है म मेरे

म्वद्रव्य भोक्ता होनेपर भी मरा दुष्ट मन परद्रव्य कि तर्क आकर्षित होता है थिक थिक इस कुटिल मनको एसा विचारसे अपन क्षणभरके पापको दुसरी क्षण पश्चात्तापमे सफल कर ताम उम्मेर तरु स्वात्म गुणोंमे रमणता कर अन्तय स्थानको प्राप्त कर लिया एमे महासत्ता-वालेको शास्त्रकारोंन दुमरा उत्तमोत्तम पुण्य माना है यह भी जग-तम प्रशसनिय है ।

पिच्छइ जुवइ रुच, मणसा चितेइ अहवा खणमेग ।

जो न यरइ अरुज्ज, पस्थिज्जतो वि इत्थीहि । १६ ॥

अर्थ—रूपजन्ती विनागवाली सुन्दर मधुर वचनोस काम पीडित करनवाली महीजारोंका पविचय रूपी मोहजालमे फसे हुव ब्रह्मचारी पुरुष क्षणभरक लिये उन कामी ओरतों की तरफ गगी उन भी जावे वह कामी ओग्नो प्रार्थना कर ब्रह्मचारी पुरुषोंको क्षण मात्र अपनि तर्क चित्तको आकर्षित कर भी ले तथापि वह ब्रह्मचारी अकार्य (मैथुन) व अन्दर प्रवृत्ति न करव अनन्त ममार वृद्धिका हेतु ' मैथुन ' को समज अपने दुष्ट मन रूपी अश्वकों ज्ञान चारक द्वारा पीच्छा हटा ले पीर जन्मभरमे एमे निमत्त कारणवाली ओग्नोका पविचय न कर वह ब्रह्मचारी भी जग-तरे पूजनिय और प्रशम्याना पात्र है जैसे एक सावनपुर नगरम धन्ना नामका शेठ रहता था वह निशावरमे मवाक्रीड मुद्रका कि किम-तना रत्न लाया था वह अपन मकान कि एक गुप्त कोटडीव अन्दर तीजोरीम रखा था यह वान किमी तम्करोको मालुम हुइ पगन्तु

शेठजीन अपनी तीजोगीर पक्षा ताला लगात गुप्त कोटडीके भी ताला लगा दीया था जस कीसी अन्य स्थान जाते थे उस समय मरानर भी परा ताला लगा दत ए एव तीन तालोष अन्दर जात तासे गया हुवा रत्नकी शेठजीको विभक्तुल चिन्ता नही थी वल्य वद र्वागीमे स्वेच्छया घूमा करत ए एक गोज गरमीर दिनाम शेठजी नगरक बाहर धनीचमे गय ए पीछुम चोगेने शेठजीक मरानर ताला तोड अन्दर प्रवेश कीया कीसी भजनोंने यह बतता गेठजीको कहा गेठजीको तो तीन तालोका घमड था व गरमीके पीनोमे इस शीतल वादीको छोड भी क्या ? चोगेन तो गुप्त कोटडीका भी ताला चोगेन तोड लेया परन्तु प्रमादि गेठ सागर न होनमे चोगेने ती जोगीर ताला तोड रत्न ल गया गेठजी निर्जन हा अतः कष्ट मन्त करत हुव महान दुःखी हुव हमी माफीर प्रसवारी पुष्पाक प्रसन्नरूपी अमृत्य रत्न है जिसरे मन (मरान) वचन (गुप्त कोटडी) काया (तीजोगी) एव मन वचन काया रूप तीर ताला लगा गया है अगर मनका ताला तुट जानपर जो भावचनी आता हो ता रत्नका रक्षण कर मने है यहा पर यह दृष्टान्त लागु पहना है कि मनरूपी हस्ती कदाच उन्माग चला भी जात तो भी ज्ञानरूपी अकुरामे इनको मन्मार्ग ला मने है जेम गेठजीर मरानका ताला तुट जानपर भी तो तालोमे रत्नका यत्न कर मने ए मनका पाप मनस उत्तर भी मके है परन्तु प्रेमादि गेठजीकी माफीर वचन और काया ताले भी चोगेस तुला द तो कीर रत्नका रक्षण होना असम्भव है इस ब्रह्म प्रथम तो एम अपत्ति ओम्भाका पश्चिद्य करना ही दुःख ममुद्रमे डुबता है कदाच कीसी मोन पवन चलनम चंचल मन क्षणमात्र

चलायमान हो भी जावे तो उसे शीघ्र अपन स्थानपर ले आनवाले महान् पुष्प प्रशसनिय ही समजना चाहिये.

साहूवा सट्टोवा सट्टार मतोस सायरो हुज्जा ।

सो उत्तम मणुस्सो, नायन्वो थोव संसारो ॥ २० ॥

अर्थ—साधु भगवन्त सदैव नौवाड मयुक्त ब्रह्मचर्य व्रत नौ कोटी विशुद्ध पाजन करते हैं याने १ जहापर लिनपुमक और पशु हो वहा पर न रहै = त्वियोकि अंगार रम्वाली कथाए न कर ३ त्वियों जिस आत्मन या भूमिपर घेठी हो वहा कमसेकम दो घडी तक न बठ ४ त्वियोफ कामी अगोपागादि अवयवोरो निपयट्टिसे न देखे ५ भीत ताटी कीनातके अन्तगम रही हुइ ओरतोंका विषय शब्द हास्य-विमोद-कामनीडाके शब्द न सुन ६ पूर्व गृहस्थावस्थाम पाचेन्द्रियके विषयसुर भोगवीया हो उम याड न कर ७ नित्यप्रति मरम आहार जो मदनदीपक हो वह न कर ८ निरसाहारभी प्रमायसे अधिक न कर ९ शरीरक मर्दन स्नान कर शुश्रुषा न कर एव नौ वाड महित ब्रह्मचर्य व्रत पाले । और आवक भी सदा स्वदाग मतोप याने अपने निराह कीया हुवा सेही सतोप रग, परदाग बैस्या विध्वा आदिका त्याग रूप ब्रह्मव्रतको पाले अर्थात् उन साधु आरकोको भी शास्त्रकारेन उत्तम पुरुष माना है कारण ऐसे आवकादि भी मुद्रानशेठकि माफीन स्वल्प मसागी होत है

पुरिसत्थेगु पण्डइ, जो पुरिसो घम्म अत्थ पणुहेसु ।

अनुत्तामपाराह, मज्झिम सूचो इणइ एसो ॥ २१ ॥

अर्थ—जो मनुष्य समग्र अन्तर गा हुना भी धर्म और काम तीनों धर्मों को साधन करना हुआ अन्तर पास एक दुसरों थादा न करने हुये अर्थात् धर्मक ममयमे धर्म अथ-द्रव्यापाजन क समय अथ और पूर्ण मचित कर्म निर्जंग या मनन विकल्प दूर करनेक इग नाम तथा सननिक लिय अपन निकागी परिणामको शान्त करनेक लिय काम इन तीनों धर्मों को सवन करता भी हय क्षेत्र उपादयको धर्म-र समझता हुआ भी सदाचारमें प्रवृत्ति करनेवालोंको मध्यम पुरुष कहा जात है जैसे आनन्द, कामदेव, भरत, पोरराली आदि गृहस्थधर्म पा-जन करत श्रीवत्त सेवन करत हुए भी धर्मकारों ही उपादय समझन थ आवकोंक लिय अपन्य मध्यम और उत्कृष्ट रहस्ता धतलाया हुआ है जैसे एक दशन आवक होत है ॥ अपन्य दुसर प्रनधागी होत है वह मध्यम तीसर प्रतिमा प्रतिपत्त आवक उत्कृष्ट दमे माने गय है इस वास्त आवकोंको उत्तम पुरुषकी तथा मध्यम पुरुष कि गीणती में गीना है वह प्रगोंकी अपक्षा है वस्तु अद्वा तत्त्व रमणता कि अ-पेक्षा तो आवक भी उत्तम पुरुषों कि ही जननीमें है ।

एषसि पुरिसाण, जड गुणगहण करेमि बहुमाणा ।

तो असन्न सिवसुहो, होसि तुम नत्थि सदेहो ॥ २० ॥

अर्थ—यह जो ध्यात प्रसारक उत्तम पुरुष धतलाये है इन महाभुभावोंका अगर तु अन्त करणस गुणग्रहण करगा और इन महा-पुरुषोंका आदर सत्कार गुणकीर्ति क साथ बहुमान करेगा तो सदेह रहित शिवसुख नजदीक होगा । कारण दुसगोंक गुणोंके ग्रहण करना

है तो एक कीस्मत दुसरेके गुण अपने अन्दर प्रवेश करना है जैसे कीसी मनुष्यमें सत्य बोलनका गुण है तो आपनो सत्य प्रीय लगेगा तब उस सत्यका अनुमोदन होगा जो वस्तुप्रीय लगनी है वह कीसी न कीसी समय ग्रहण हुआ ही करनी है उसी वस्तुका पक्षपातिभी बनना पड़ता है जब सत्य प्रीय है तो सत्यका पक्षपाति हो उस सत्यको ग्रहण करनेका समयभी आ जावगा इसी माफीक गुणी जनोका गुण अपनेमें गुणीयों को तो हानि लाभ नहीं है किन्तु अपनी आत्माको जो बड़ा भारी लाभका कारण हो जाता है जैसे स्थानायागजी सूत्रके चतुर्थ स्थानमें कहा है कि गुणीजनोका गुण करनेसे दूर रहा हुआ वैल्यज्ञान नजदीक हो जाता है इस वास्ते चैतन्यरा कन्याणके रह-स्तामें गुणग्राहीपणा प्रथम भगलावरण है अगर उस भवमें और पर-भवमें सुखी होनेकि निश्चिन् भी अभिलाषा रखत हो ऊन महानुभावों को प्रथम परगुण ग्रहण करनेका पाठही पढ़ना चाहिये ।

पासत्याइसु अहुणा, सयमसिदिलेसु मुक्जोगेसु ।

नो गरिहा कायच्चा, नेव पससा सहामज्जे ॥ २३ ॥

अर्थ—पचम दुष्कालमें शरीरादि मद सहननके कारण ले के समयमतपसे शीथील पड़ हुब पार्श्वस्था उमोत्रा कुशीलीये ससक्के मोह-पीडित जोलुपताके वशीभूत हुवे वेपधारीयोंको देखके उनोकिभी निग्न न करना अवज्ञा—अपमानादि न करना चाहिये और उन लिंगगारी मडल कि प्रशंसा भी न करना चाहिये कारण जगतके सर जीव कर्माधिन है अगर शासनको कलकित करनेवाला हो तो उस हितशिक्षा दे-

मधुर वचनोम समजाना उत्तम पुरुषोंका कर्तव्य है किन्तु उनोंकि निंदा कर उलट रहस्य न लगा दना चाहिये कि जीनाम भविष्यमें लाभके निष्पन्न तुफशान उठाना पट्ट वह अपमानित निर्भीकता से अनेक दुराचार करेंगे उसका मूल कारण निंदा करनेवाला होगा भविष्यमें उसके पुत्र पल उसही भोगयता पट्टगा अगर रगत आरगणका पल निष्पन्न पात दृष्टिमें दुनियाको धनाना चाह तो सुशीमें बना सके है जय निज भी न करगी तो जन हिंगधारीयोंकी प्रशंसा भी न करना चाहीय कारण जन पाश्चस्याने कि प्रशंसा करनेसे उनोंके शिष्याकाचारको और भी मन्द मीलेंगी जीनसे यह अधिक दुराचारी हो शासनको आपात तुफशान पहुचावगा जिसका भी निमित्त कारण यही प्रशंसा करनेवाला होगा एव दुधार्थके समय उत्तम जनकों मध्यस्थ वृत्ति रखके अपनी आत्माका पर्याप्तता करना ठीक है जगतम बहुतसा मेल भरा हुआ है इ भव्य । तु कीम कीमके मेलको धारणा तु तर्ग आत्माका ही मेल धोके उज्ज्वल बना ले तो तर त्रिय मय जगत उज्ज्वल ही है ।

कारण तेसु करण, जइ पन्न तो पयासए मेम ।

अइ रसइ तो नियमो, न तेसि दोम पयासइ ॥ २४ ॥

अर्थ—प्रयत्नता और भी उपशकोको हितशिक्षा दत्त है कि है उत्तम जना । अगर वह पाश्चस्यादि रगोरम उन्माग जा रहा है अपनी आत्माका भान सुझा हुआ तुच्छ सुख कि अभिलाषासे महान सुखोंको गमा रहा है इसलिए उन वाल जीवपर पर्याप्त भाव लाय अगर वह हितशिक्षाको अमृतनृत्य मानना हो अपनी

भूजरा कुतूहल करता हो आइन्द्राक्ष जिय उम उन्मार्गकी छोड़ना हो
 गम भरीय हो तो उनक हितक लिय अच्छी शिक्षा दो । जैसे पद्म
 श्रष्टिक जय नाम कुसरका नीन बातोका दुर्व्यसन पट गया जा, एक
 जुवा खलना, दुसरा बैश्याक बहा जाना, तीसरा हलयादयोक बहा जाके
 मूय द क मीठाइ ले गाना, गऊन कुँवरको गृह्त मना करी, पान्तु
 गैरि आइत न छुटी आग्यीर शठना अन्तिम समय आ पहुचा,
 पुरन कहा कि म्यो पिताजी ! आपन नीलम कुच्छ हो तो कही हम
 समय सग मरन्गी गृह्त गठ व बैमार शंठजीन कहा पुर ! अगर तु
 मरा कहना करता हो तो में तुम आज अन्तिम शिक्षा दना हू कि नर
 जुवा गलना हो तो गहाण न जाना अपन मोतीमहल जो मोड़न रूपयो
 रि लागतम बना है गहाण जुवा गमना बैश्याक बहा जाना हो तो
 पलशुभ मूयादय कि टेमम जाना और हलयाया कि दुकानस मीठाइ
 लाना हो तो मध्याह्न-डोपहरको लाना पुरन मोचा किया तो तीनों
 बातों मर मनमानी है ईतन मनुष्योमे मग पिताजी कहत है इस
 रास्त इन कार्योंको करता हुवा भी मे जगतम निदापी होउगा ऐसा
 विचार अपन पिताजीक वचनको सिरो धारण कर लिया शंठजी
 गुजर गय सर लौकीक व्यग्रहार करनक बाद जुवा खलनगालेको
 अपन मोतीमहलम बुलवा लिया जुग खल रहे ॥ इनमें एक साहु-
 कारन उम मोतीमहलको देखत देखत नगामे आसु छुट गय इसपर
 जयकुँवरन कारण पुच्छा अमने क्या रि भाइ ! मर पिताजी अर गुजर
 थ तर मर हम भी अच्छा महल था न मे जुगाम गमा दीया वह सुन

जय गेठन सोचा कि न जान मगी भी यह नशा न हो कुछ दर
विचार कर उन ऊँच समनेवालोंका बड़ा भारी निस्कार कर निराज
दीया कि मेर जुवा नही खलना और नही मगी मरानात गमानि ।
फौर शुभ वैश्याने बहा गया तो शुभ वैश्याका रग ढग इस कदरका
वीगटा हुआ था कि दरत ही घृणा आन लग गइ अपन वीर्यरत्नका
या अमूल्य इज्जतका ग्याल होत वैश्याका भी त्याग कर नीया
बादम मध्यात दोपहरको हलवाइन चहा माठाइ गरीदनको गया तो
बहा बुते फटाइयो खाट बह है कलानदन अन्तर सेंकडो मस्सीर्यो
जमी हुई पड़ी है पाखीक अन्दर नीड कलबलाट कर रहे है बहुत
दिनोंक आत्म इलीयो चल रही है दुधर मात्रा कि दुगन्ध आ
रही है इत्यादि व्यवस्था दूर जय ऊँचरका दील हट गया कि मर
शीर्षम जो वैमानी होती थी यह मन इस मूल मिष्टानका ही कारण
है ऊँचरजार तीनों दुर्गुण जो तीरस्कार बुद्धिसे कई वर्षों तर न छुट
थ वह हित मधुरतासे स्वय ही कुछ कर गय । इसी माफीर दुर्गु
णीयाक दोषण छुटानम सहजम छुट सक्त है परन्तु अगर यह
दुर्गुणी हितशिक्षा पर भी गुस्सा करना हो तो उनोके दोष प्रकाशित
न करना चाहिय बहा उन दुराचारीयो पर करुणाभास लान मध्य-
स्थपणा ही गवना आत्मकल्याण है ।

मपइ दुसम समण, नीमइ थोवो वि जस्स धम्म गुणो ।

वहुमाणो पापवो, तम्स सया धम्म बुद्धिए ॥ २५ ॥

अर्थ—आचार्यजी फरमात है कि हे मोक्षामित्रापीयो ।

आज यह पंचम आग महा दुःकाल है पूर्ण चाग्रि पालना दुष्कर है उत्तम त्रियांबो करना मुश्किल है दुष्कर तपश्चर्य करना अति कठिन है कारण प्रथम तो भगवत्क्षेत्र जिस्मे भी दक्षिणभक्त दुन्दुभर्षिणीम अधिक कृष्णपक्षी जीर्णों कलह कदामही, अभिभानी, आप स्वार्थी हान पर भी असयति पूजा रूप आश्चर्य इस दुष्कालमें अगर किसी व्यक्तिमें स्वतः ही धर्म गुण हो त्रिर्लोक हृदयमें शान्त निवास करता है अन्त कर्णस शासन सेवा, धर्मोन्नति आदि उत्तम कार्यमें प्रवृत्ति हो तब मन धनसे यथा शक्ति समाज सेवा चाहता हो तब मयमादि स्वतः ही गुण हो अकृत्य कार्यसे पराङ्मुख रहता हो कुछ भी न हो तो उत्तम कार्योक् अनुमोदन करनेका भी गुण हो ऐसे शान्त भक्तोंका धर्म बुद्धिमें मंदैव आदर स्तुकार बहु मान करना चाहीये कारण इस महा भयकर कलिकालमें ऐसे मनुष्य भी मिलना बड़ा ही दुष्कर होगा स्वल्प गुणोवाले जोशोंका बहुमान पूर्वक भक्ति करनेवाला भी अगम्य पुन्योपाज्जन कर भविष्यमें अनाद्य अनाग्नि मुखोंको प्राप्त कर सक्ता दुसरी वस्तुओं पुन पुन मिल सक्ती है परन्तु स्वाधर्मी शासन भक्त मिलना दुष्कर है वास्तव में भव्य जीर्णों ! इस कलिकालमें कल्पतरु समान गुणी पुरुषोंका बहुमान कर ।

जउ पगगच्छि सगच्छे, जे संविम्व बहुस्मुया मुखिणी ।
तेसिं गुणगुराय, मा मुच सुपच्छर ण्णइओ ॥ २६ ॥

अर्थ—इस कलिकाल नामा दुष्काल आगरे अन्दर दुहा

शक्तिशाली निम्न गणना में गणना की उच्चतम परिणाम रत्न हो
 मारा यज्ञानका अनन्त गच्छमद, प्रियाम् मलय, विरागम्
 अहम् धारण करनेवाले स्वयंसेवक परनिष्ठ कर मर्त्य जीवों
 के योग्य हयम् ह—क्यापरम्परा बीज को न के हीर चाफ
 स्वयच्छ्रय पाश्चर्य शिष्टिप्राप्ति अपठित स्यात् हो पण्डित य
 गाद्वीप्रवाह नो नन नृशीलम सत्यम् यन हा ज्ञान है और
 परगच्छ य गीताध निचापात्र ज्ञानीया वि निष्ठा आशानना परनम
 तनीकभी विचार नहीं करत है न जीवा को आपाय श्री उपज
 दत है कि न भव्यात्मायो । चाह परगच्छका हा चाह स्वयच्छ्रय
 हो किन्तु जीना के अन्दर ज्ञानात् उत्तम गुण हो बहुधन गीतार्थ
 और दशकान्तनुमात्र प्रिया करनेवाला हो उन महान् पुरुषों का
 बहुमान नित्य भक्ति मरा कर लाभ उठाना चाहिये इन्हीं ही तुमारा
 कल्याण है अगर स्वयच्छ्रय स परगच्छवालो म सामान्यना विद्या
 प्रवृत्ति का किंचित् भद्र दरनर्म आप ना भी मच्छर भावना दुसर
 ज्ञानादि गुणों का अवश्य अनुमोदन करना चाहिये न भ । प्रिया
 नरम तुम्हें य विराग करना चाहिये कि भगवान् बीर प्रभु शम्भु
 कि तो एकहा प्रिया है हीर पीछल आपायोन् एवयापना प्राप्त
 कर उनापना का माफीक प्रियाता आप्रह कर उमपर आप्रह हो
 सय सगपि धीनगम शम्भु अनकान्तवादवाला है अगर एव
 नय कि अपक्षा सय भी हो मन्नी है किन्तु हमारा मत्य और
 दुसर गच्छ वार्ग का असत्य हम वीरपुत्र दुसर वीर दुशमन हम
 सम्यक्दृष्टि दुसर मिथ्यादृष्टि यह विचार करना एक योग्यता हउ—

प्राप्त है। यह क्या महत्त्व है न केवल गुणीजन महानुभावादि गीतार्थों का
वहुमान करना ही आत्म उत्थापन का मुख्य साधन है।

गुणरक्षण महियान्, महामाणं जो करत सुद्धमणो ।

सुलहा यन्न भवमिय, तस्म गुणा इति नियमेष । २७ ।

अर्थ—इ भव्य अगर तु भवान्तर में उत्तम गुण प्राप्ति की
अभिजापा रखता हो तो इस भवमें जो महानुभाव गुणरक्तोक्त भूषित
यान उत्तम गुणा में महिन हो ऐसे गुणीजनो का अपन शुद्ध मन
में बहुमान करो ताकि यह उत्तम गुण भवान्तर में तुम्हें सुलभता में
सीतर्ग आचार्य श्री यह बात निर्णय प्रकर कहते हैं कि इस भवमें
तीस गुणों का बहुमान करोगे वही गुण भवान्तरमें महजही में
प्राप्त होगा जैसे एक एक नामने ग्राममें जगद्व नाम ब्राह्मण महान
गोपी शक्तिदी वमना वा इनके विशाल कुम्ह्य होनेपर भी दुग्ध
कोई भी मन्त्रायक नहीं था एक समय जगम सुरतक महान तपस्वी
मुनि उन ब्राह्मण पांडा के अन्तर में जा रहे थे वह उन गोपी
विप्र को देख करुणा लाकर उस भद्रक के पास गया ब्राह्मणाने पुत्रा
कि हे मुनि ! मग गेग और शक्तिद केमें जा मला है ? मुनिने कहा
कि हे विप्र ! पर भवमें श्रीमती महगुणीयों कि आशानना—अग्रगुण
यात्र गुप्त निता करन का यह फल है जो जीव शुभाशुभ कर्मोपार्जन
करत है उसे प्रशो या विपाका अग्रय भुक्तापी पटना है परन्तु
तु भवान्तरमें सुरी लेना चाहता हो तो एक सीतर्ग आसन का
अग्रग ले और गुणी जनो का गुण कीतर कर ताकि तुम्हें भवान्तर

में वीतराग का शासन प्राप्ति होगा 'इत्यादि' हितदिक्षा ३ व मुनि ने
 कहास धने गय ब्राह्मण न गतग्नि वह ही ध्यान लगा दिया कि
 मरत वीतराग का शासन और मुनि बड़ हा उपकारी होत है जोकि
 मर पुत्रस्य राजा कोइ मर पास नहीं आता है मरी मर मभाल भी
 नहीं लेत है परन्तु परमपूज्य यह जैनमुनि निस्वार्थ और परोपकारी
 है कि मर पास आव मुझे कन्यागा का रहन्ता बनजाया है घट दिन
 मर आनन्दकारी होगा कि मैं वीतराग व शासन समरमरण का
 लक्षण वह इस भावनामें विप्रन अपना आयुष्य पुण्यकर भट्टीक
 परिणामा म राजप्रवृत्तता व आन्दर धनार गड कि भट्टा सटाणी व
 तुनीमें पुनपणे उत्पन्न हुवा बड़ा महोत्सव व साथ उका नाम दत्त
 कुमार लीया जब वह तान बपका हुआ तब पनव परपर एक जैन मुनि
 भिन्नार लिय आया था उन मुनिका स्वर व मनिष्ठानम विचार करन
 अनुपमा लगान हुन उस श्रेष्ठो जातिस्मरण शान हुन अपना पूर
 भव दया और उन मुनिको बन्दन समस्कार कर याज्ञा कि ह प्रभो मैं
 आपके साथ बलुगा मुझे वीतराग का शासन प्रीय लगता है मुनि
 न कहा कि ह भव्य ! तुमने कहापर वीतराग शासन कि आगयना की
 हागा तब उन वरान अपन पूर जगदव का भव वह मुनाया और
 विशर बोला कि ह न्याय ! यह आप मुनियाकाही प्रभार है कि मुझ
 महान् दुष्टो से श्वाश इस वीतराग शासन का भल बनाया है
 इत्यादि वातालाप होते हुवे दय सठ सटाणी रहत मुरा हूव
 मुनि अपन म्यानपर बने गय 'स्तुतुंय' शासन का भक्त हुवा
 बलपणे से मन्त्रि जाना मुनिया व दर्शनभक्ति सेवापूजा करना क्रमश

युवक वय में भी शासन क अन्तरे सुन्दर कार्य करता हुआ मसार से निरक्त हो मुनि सुन्दरगचार्य क पास दीक्षा ले उपनिहायी घोर तप-
 श्रया कर कमोंको दारान्त द अन्तर्म अप्रकर्म चक्रचूर कर मोक्ष में
 अनन्त सुखों प भोगी हुये इस छोटे से दृष्टान्त म यह समझना
 चाहिये कि जीस गुणोंकी अतकणसे अनुमोदना करत है गुणी
 जनोका बहुमान करत है वह गुण भवान्तर म सहजही प्रगट हो
 सुखी हो जाता है ।

एय गुणानुराय सम्म जां धरउ धरणि मज्झमि ।

सिरि सोमसुत्तर वय, सो पावट मव्व नमणिज्ज ॥ २८ ॥

अर्थ—उपमहाग्मे आचार्यश्री फरमात है कि इस पृथ्वीपर
 अनार धारण कर भव्यात्मावो इस गुणानुराग नामका कुलकको
 अरण कर यथामति समझकर अपने कोमल नि शल्य हृदयक अन्दर
 धारण कर उत्तम गुणी जनोका बहुमान पूर्वर आदर सत्कार सेवा
 भक्ति करेंगे वह जीस द्रव्यभाव लक्ष्मीयुक्त मौम्यसुन्दरता अथान
 सोमसुन्दरसूरीक चरणरुमल निरामी जिनहर्षगणि महाराज फरमात
 है कि गुणानुराग धारण करनवाला सरल सुगम जलोक्य पूजनिय
 तीर्थर पदकों प्राप्त कर सर लोगोंक वन्दनिय होगा याने गुणानु
 राग तीर्थकर प दनवाला है

यह गुणानुराग कुलक नामका ग्रन्थ वालाभाइ कवलभाइ
 अहमदाबादवाला कि नफीमे मस्तिश शब्दार्थ द्वाग प्रसिद्ध हुवा था
 वह पठनस मुक्त रहत ही अनुराग हुवा उमरी मन

लोहाउटमे परिपदाक अन्तर व्याख्यानमे बाबा था किन्तु अर मणिम
 तथा गुजराति भाषाम हानम स्वल्पबुद्धिवाले माग्जाहा लोग पूरा लाभ
 नही गठा मर माथम श्रीराजता कि भा आप्त् पूर्वक प्रेरणा हीनमें
 बाबक बगर पठनपाठन निमित्त यह किन्ता भाषान्तर थवामनि किया
 है ह्यस्तथाम भुल होनेका स्वाभाविक नियम है इस नियमानुसार
 मतिनोप दृष्टिदोष या मरी मानुभाषा माग्जाही होनेम भाषानोप ग्हा
 हो तो मज्जन महाशय समा कर मज्जनका पूरक सूचना कर ताक
 द्वितीया श्रुतिम सुधार करवा नीया जाय

भाषान्तर कनाका परिचय—श्री पाश्चनाथ प्रभुष पात्पर
 श्री शुभन्त नामक गणधर हुए, दुसर रात्र श्री शरित्त नामक श्री
 चाय हुआ, तीसर रात्र श्री आरमसुन्मूर्ति इनाक शामनमें बुद्धिनाति
 साधुम बोधधम प्रचलान हुआ चौथ पाट श्री श्वात्रमगाचार्य
 जिनान बागह राजाधोको प्रतिपाद कर जन उनाया पाचव पाट श्री
 स्यप्रभसूरी (निगार) जिनोर चरणकमल कि सरा राजा महा-
 राजा तथा चनेश्वरी पद्मावति, अरिका और सिद्धायिका करती थी
 इन परोपनाग महात्मावोन भित्तमाल नगरम २०००० घरोको प्रति
 बोध जैन श्रीमाल तथा पद्मावति नगरीमें ४४००० घरोको पोरवाल
 बनाया था छट पाट विद्याधर कुलभूपण श्री स्तनप्रभसूरी हुए जिनान
 श्रीशीयो-उपश्राफ्तम उपपद गज्जादि ३८४००० घरोको प्रनियोध
 कर जैन आसवाल बनाथ और श्री चरमनार्थकर शामनाधीश वीर
 भगवानक निम्बकि प्रणिण करवार पवित्र तीर स्थापना करी मान्य
 पाट पर श्री यक्षप्रसूरी हुए जिनोन गजपद गणम मणिभद्र यक्षकी

